

भारतीय लोक कला: प्राचीन काल से आधुनिक युग तक

सुरेन्द्र कुमार गौतम

असिस्टेंट प्रोफेसर, चित्रकला, कौटिल्य महिला शिक्षक प्रशिक्षण, महाविद्यालय, कोटा, (राज.)

सारांश:

भारतीय लोक कला प्राचीन काल से देश की सांस्कृतिक और सौंदर्यात्मक धरोहर का महत्वपूर्ण हिस्सा रही है। यह मानव की अभिव्यक्ति और सौंदर्य भावना का प्रतीक है, जिसका उद्भव सभ्यता के आरंभ के साथ हुआ। लोक कला में चित्रकला, मूर्तिकला, स्थापत्य कला, हस्तकला और शिल्पकला शामिल हैं, जो गाँव, शहर, रेगिस्तान और पहाड़ों तक फैली हैं। यह कला परंपराओं, विश्वासों, त्योहारों और संस्कारों से गहराई से जुड़ी है, जो जन्म से मृत्यु तक मानव जीवन का हिस्सा बनी रहती है। प्राचीन गुफा चित्रों से लेकर आधुनिक हस्तशिल्प तक, लोक कला समय के साथ विकसित हुई, फिर भी अपनी जड़ों से जुड़ी रही। यह धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों को पीढ़ियों तक हस्तांतरित करती है।

भारत की लोक कला क्षेत्रीय विविधता के साथ समृद्ध है, जैसे राजस्थान का मांडना, बंगाल की अल्पना, उड़ीसा का पट्ट चित्र, और मधुबनी कला। ये कलाएँ प्राकृतिक सौंदर्य, प्रतीकात्मकता और स्थानीय सामग्री के उपयोग से निर्मित होती हैं। स्वतंत्रता के बाद हस्तकला उद्योग के पुनरुद्धार ने इसे व्यावसायिक पहचान दी। लोक कला न केवल सौंदर्य प्रदान करती है, बल्कि सामाजिक एकता, रचनात्मकता और आत्मिक शांति को भी बढ़ावा देती है। यह मानव जीवन को पूर्णता देती है और आधुनिक कला को प्रेरणा प्रदान करती है। विश्व स्तर पर भारतीय लोक कला की श्रेष्ठता बेजोड़ है, जो इसे राष्ट्रीय निधि बनाती है।

शब्द कुंजी - लोक परम्परा, संस्कृति, रीति रिवाज, अभिव्यक्ति स्थापत्य कला

प्रस्तावना

कला मानव संस्कृति की उपज है। यह मानव की सौंदर्यात्मक भावना का परिचायक है। यहाँ की कला और संस्कृति में अनूठा समन्वय दिखाई देता है, जो मानव समाज की अनेक पीढ़ियों से होकर आज तक समाज में व्याप्त है। प्राचीन परंपरा से लेकर वर्तमान काल तक यह सहज कला सफलतापूर्वक देश, समाज और गुरु की समृद्धि के लिए प्रयोग की गई है। लोक कला आत्मिक शांति व मंगल भावनाओं से ओत-प्रोत है। भारतीय लोक कला हमारे देश की परंपराओं, मान्यताओं, कथाओं, संस्कृति, तीर्थ, त्योहारों, संस्कारों और शुभ कार्यों आदि पर आधारित होती है। यह हमारे जन्म से मृत्यु तक हमारे साथ जुड़ी रहती है। लोक कला मनोरंजन, जादू-टोना और अलंकरण आदि रूपों में भी अपनाई जाती है। लोक कला के विषय, माध्यम और तकनीक सभी क्षेत्रों के अनुसार अलग-अलग होते हैं। भारत की लोक कला दुनिया की अन्य लोक कलाओं से श्रेष्ठ व समृद्ध है। हमारा समाज भावनात्मक और आस्थावान रूप में लोक कला से जुड़ा हुआ है। जैसे पशुओं में गाय श्रेष्ठ है, पक्षियों में गरुड़ प्रधान है और मनुष्यों में राजा उत्तम है, वैसे ही कलाओं में लोक कला श्रेष्ठ मानी जाती है।

भारत की अनेक जातियों और जनजातियों में पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही परंपराओं को लोक कला कहा जाता है। यह जनसाधारण की सहज अभिव्यक्ति का रूप और सशक्त माध्यम है। यह आरंभ से ही मानव सभ्यता के साथ-साथ धार्मिक विश्वासों, परंपराओं और आस्थाओं के साथ पली-बढ़ी है। लोक कला की परंपरा प्राचीन काल से लेकर आज

तक भारत में अनवरत गति से चली आ रही है। समय के साथ इसमें परिवर्तन भी होते रहे हैं। इसके साथ ही आज समाज की लोक परंपराएँ, सभ्यता और भावनाओं का इतिहास क्रमबद्ध रूप में पाया जाता है। कला मानव जीवन की सौंदर्य अनुभूति के आदर्श को प्रकट करती है। जैसे अजंता में स्थित कलाकृतियाँ हमारे आदर्शों का ज्ञान कराती हैं। वैदिक काल से लेकर आज तक के युग की कला पर उस युग की छाप हमें आज भी देखने को मिलती है। कलाओं की उन्नति और विकास में लोक कला का भी बहुत महत्व है। लोक कला का विकास जनसाधारण की भागीदारी के रूप में धार्मिक, सांस्कृतिक और परंपराओं के साथ-साथ निरंतर चला आ रहा है।

भारत में हमेशा स्वदेशी (देशज या स्थानीय) ज्ञान का भंडार रहा है, जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित होता रहा है। प्रत्येक पीढ़ी में कलाकारों ने उपलब्ध सामग्री और तकनीकों से सर्वश्रेष्ठ कलाकृतियों का निर्माण किया है। असंख्य विद्वानों ने इन कला रूपों को लघु कला, उपयोगिता कला, लोक कला, जनजातीय कला, जनसाधारण कला, संस्कार कला, शिल्प आदि कई नाम दिए हैं। यह कला अति प्राचीन काल से अस्तित्व में है। पूर्व-ऐतिहासिक काल के भित्ति चित्र और सिंधु काल के मिट्टी के बर्तन, टेराकोटा, कांस्य, और हाथी दाँत की कलाकृतियों के उत्कृष्ट उदाहरण हम देख सकते हैं। प्रारंभिक इतिहास और उसके बाद के समय में हमें हर जगह कलाकार समुदायों के संदर्भ मिलते हैं। उन्होंने बर्तन, कपड़े, आभूषण और अनुष्ठान या मन्त्र की मूर्तियों का सृजन किया। उन्होंने अपनी दीवारों और फर्श को सजाया और कई कलात्मक कार्य अपनी दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए किए। इसके साथ ही स्थानीय बाजारों में अपनी कलाकृतियों की आपूर्ति भी की। उनकी रचनाओं में स्वाभाविक सौंदर्यबोध की अभिव्यक्ति है। इनमें प्रतीकात्मकता, रूपांकनों का विशेष उपयोग, सामग्रियों, रंगों और निर्माण की विधियों का विशिष्ट उपयोग लोक कला के निर्माण में किया जाता है। लोक कला और शिल्प के बीच एक पतली रेखा है। दोनों में रचनात्मकता, स्वाभाविक प्रेरणा, आवश्यकताएँ और सौंदर्यबोध शामिल हैं।

आज भी कई क्षेत्रों में हमें ऐसी कलाकृतियाँ देखने को मिलती हैं। उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में भारत और पश्चिम (यूरोप) में एक नया परिप्रेक्ष्य आधुनिक कलाकारों के मध्य उत्पन्न हुआ, जब उन्होंने अपनी रचनात्मक गतिविधियों के लिए अपने आसपास की लोक कला (पारंपरिक कला) को प्रेरणा के स्रोत के रूप में स्वीकार किया। भारत में स्वतंत्रता के बाद हस्तकला उद्योग का पुनरुद्धार हुआ। यह क्षेत्र व्यावसायिक उत्पादन के लिए भी संगठित हो गया। इस कला ने एक विशिष्ट पहचान भी प्राप्त की। राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों के गठन के साथ अद्वितीय कलाओं और उत्पादों का प्रदर्शन किया गया। भारत की कला और शिल्प परंपराएँ भारत के पाँच हजार साल से अधिक की मूर्त विरासत के इतिहास को प्रदर्शित करती हैं।

लोक कला का महत्व

लोक कला का संबंध मानव जीवन के प्रारंभ से लेकर आज तक जुड़ा हुआ है। आज का मानव पहले के मानव की ही तरह था, क्योंकि आज का मानव अपनी संस्कृति और सभ्यता के उन्नत रूप तथा आधुनिकता के साथ पूर्ण रूप से जुड़ा हुआ है। प्राचीन काल का मनुष्य उस समय की परिस्थितियों के अनुसार ही अपना जीवन-यापन करता था। वह नदियों का पानी पीता था, कंदमूल और फल खाता था, और धीरे-धीरे शिकार करने के लिए पत्थर के नुकीले हथियारों का आविष्कार किया। आग का आविष्कार होने से वह पहले कच्चा मांस खाने के बजाय मांस को आग में भूनकर खाने लगा। उस समय मानव का निवास प्रकृति-प्रदत्त गुफाओं में था, जहाँ वह अकेले या झुंड बनाकर रहता था।

जब मानव ने गुफाओं में स्थायी रूप से रहना शुरू किया, तो उसने अपने आसपास की दीवारों और छोटी-छोटी शिलाओं पर चित्रकारी शुरू की तथा छोटे-छोटे चित्रों का चित्रण किया। वह प्राकृतिक रंगों से उनमें रंग भी भरने लगा। इस प्रकार, इन प्राचीन चित्रों के अध्ययन से आदिमानव की कला के प्रति रुचि का पता चलता है। इसी कला को आदिम

कला भी कहा जाता है। प्राचीन काल में लोक गाथाओं से संबंधित चित्र भी प्राप्त होते हैं, जिनमें दक्षिण भारत के लोक देवता, उत्तरी भारत के लोक देवता तथा राजस्थान और अन्य राज्यों के लोक देवता प्रमुख हैं। लोक कला भारत के लगभग हर घर, समाज और जनमानस में फैली हुई है। आज के समय में इसका प्रचार-प्रसार प्रत्येक राज्य में परंपरा के माध्यम से किया जा रहा है। लोक कलाओं का आदि मानव से घनिष्ठ संबंध रहा है। आदिमानव ने प्रकृति की शक्तियों से प्रेरित होकर उनका सरल भाव से दैवीय शक्तियों के रूप में चित्रण किया है।

लोक कला हमारे समाज में आदिकाल से ही विद्यमान है, जो आज भी निरंतर गति से चल रही है। प्राचीन गुफाओं में स्वास्तिक, चतुर्भुज, कुंडली चिह्न, हाथ के छापों के साथ-साथ अनेक इस प्रकार के चिह्नों का चित्रण किया गया है। आज की आधुनिक लोक कला आदिकाल की कला का ही एक परंपरागत और विकसित रूप है। कलाओं की उन्नति और विकास में लोक कला का बहुत बड़ा महत्व है। लोक कला एक ओर दैवीय रूपों, प्रतीकों और परंपरागत विश्वासों पर आधारित है, तो दूसरी ओर यह सामाजिक रीति-रिवाजों और परंपराओं पर भी आधारित है। लोक कला में विभिन्न प्राकृतिक शक्तियों और देवी-देवताओं का परंपरागत महत्व होने के कारण उसमें प्रतीकात्मक रूपों का अंकन और चित्रण प्रमुख होता है। कोई भी संस्कार, पूजा-अर्चना या शुभ कार्य इनके बिना पूर्ण नहीं होता। लोक कला मानव विकास के इतिहास में एक ओर आदिम कला और दूसरी ओर सुसंस्कृत कला के मध्य रही है। बदले हुए परिवेश में मानव की संवेदनाओं में भी बदलाव आ रहा है। लोक मानव द्वारा की गई समस्त कला, जो स्वयं की सुखानुभूति के लिए हो, वह लोक कला के अंतर्गत आती है।

विषय-वस्तु

लोक कला कोई साधारण विषय नहीं है। इसके अपने आधार और कथाएँ होती हैं। ग्रामीण परिवेश और लोक संस्कृति में व्याप्त रचनात्मक आचार-व्यवहार कला तत्व के रूप में परिणत होकर लोक कलाओं को समृद्ध करते हैं। परंपरागत रूप से लोक कला वह कला कर्म है, जो किसी क्षेत्र या समुदाय विशेष के लोगों द्वारा किया जाता है और जिसकी विषय-वस्तु अत्यंत व्यापक है। भारतवर्ष में लोक कला का विकास सबसे अधिक हुआ है। भारत में यह विकास प्राचीन परंपराओं के साथ आज आधुनिक समय में भी निरंतर चला आ रहा है। भारत के प्रत्येक राज्य में लोक कलाओं का अबाध गति से विकास हुआ है, जिनकी विषय-वस्तु अपने-अपने परिवेश के अनुरूप भिन्न-भिन्न है। विभिन्न त्योहारों और धार्मिक उत्सवों के लिए उनमें अनेक कलात्मक स्वरूप दिखाई देते हैं, जो लोक कला वाली सांस्कृतिक भावना के प्रतीक होते हैं। लोक कला आकृति, कपड़ा, मिट्टी, दीवार, कागज, लकड़ी और विभिन्न धातुओं से बनाई जाती है। हमारी प्राचीन मान्यताओं के आधार पर अनेक प्रकार के उपकरण और सामान आदि लोक कला के अनुसार बनाए जाते हैं।

लोक कला का विषय व्यापक है। लोक कला विभिन्न अवसरों पर भिन्न-भिन्न प्रांतों, जातियों और धर्मों की अलग-अलग प्रवृत्तियाँ दर्शाती है। लोक कला के माध्यमों को बनाने में भी विविधता दिखाई देती है। इनके लिए अलग-अलग आकारों को महत्व दिया जाता है। उदाहरण के लिए, राजस्थान और उत्तर प्रदेश के ग्रामीण घरों की दीवारों पर हाथी, घोड़े, तलवार, देवी-देवता, ओम, स्वास्तिक चिह्न आदि लोक परंपरा के विचार से बनाए जाते हैं। लोक चित्रों की विषय-वस्तु में धार्मिक, पारंपरिक, सामूहिक और सामाजिक चित्र शामिल होते हैं, जिनमें धार्मिक रीति-रिवाजों की प्रधानता रहती है। यही लोक कला की विषय-वस्तु की सबसे बड़ी विशेषता है।

लोक परम्परा

भारतीय परम्परा में लोक परम्परा से जुड़ा कुम्हार जहां ग्रामवासियों के मिट्टी के बर्तन, देवी-देवताओं की मूर्तियाँ, लक्ष्मी-गणेश, गुडिया, हाथी मोर, दिया (दीपक) आदि बनाता था, वही आवश्यकता के आधार पर कुम्हार अपने शिल्प में

नए प्रयोग करने आरम्भ कर दिये हैं तथा प्राचीन परम्परा को आधुनिक परिवेश में ढाला है। प्राचीन परम्पराएं वं सभ्यता हमारी लोक कलाओं का संस्कार है। परम्पराएं पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तान्तरित होती हैं। लोक चित्र इसके उदाहरण हैं प्रत्येक लोक चित्र, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, नैतिक तथा पारम्परिक भावों का दर्शनीय रूप रहा है। इनमें कोई भेद-भाव नहीं होता, चाहे कोई निर्धन हो या धनवान लोक कला सभी के घरों की भूमि, भित्ति को एक जैसे सजाते व संवारते हैं। आधुनिक काल में विभिन्न शुभ अवसरों का त्यौहारों के अवसर पर बनाए जाने वाले रूप हैं एवं भित्तिचित्र व लोक चित्र कला के रूप में पाये जाते हैं। ये भित्तिचित्र व लोक चित्र मानव के जन्म के पूर्व से प्रारम्भ हो जाते हैं और सम्पूर्ण जीवन काल तक अनेक संस्कारों के रूप में जुड़े रहते हैं।

प्रान्तीय कला

भारत में पृथ्वी को धरती माता कहकर उसकी पूजा की जाती है अपनी धरती माँ के प्रति भक्ति भावना से प्रेरित होकर लोक मानव ने पृथ्वी का श्रृंगार तथा अलंकार करके धरती माँ के प्रति अपनी श्रद्धा को प्रदर्शित किया है। भारत देश में भिन्न-भिन्न प्रान्तों के अलग-अलग लोक कला प्रचलित हैं जैसे गुजरात में साथिया, राजस्थान में माण्डना, महाराष्ट्र में रंगोली, उत्तर प्रदेश में चैक चूरना, बिहार में अहपन, बंगाल में अल्पना, उत्तराखण्ड के गढवाल क्षेत्र या पहाड़ी क्षेत्र में आपना उडीसा में चीता-जोटी भारत में धरती माँ को विभिन्न आलेखनों के द्वारा सजाने के काम को कोलम के नाम से पुकारते हैं।

लोक कला में सौन्दर्य का आकर्षण, संगीत और नृत्य की माधुर्य और लय चित्रकला की अभिव्यक्ति मानव की सुन्दरतम भावनाओं को सदैव अपनी ओर आकर्षित किए रहती है किसी भी देश/प्रदेश की जन-कला वहाँ के जनसामान्य के हृदय को छू लेती है भारत में हर क्षेत्र तथा घर में धरती को अलंकृत करने के लिए इसी प्रकार के आलेखन बनाए जाते हैं रंगोली सजाना, चैक पूजना, या अपना और कालम लगाना धार्मिक भाव से प्रेरित होता है, जिसमें आदर एवं श्रद्धा से आलेखन रचना की जाती है इन आलेखनों का उद्देश्य आकर्षक तथा सुन्दर ढंग से धरती का अलंकरण बनाकर आध्यात्मिक दृष्टि से पारलौकिक शक्तियों की पूजा आराधना करना होता है।

राजस्थान में विशेष अवसरों पर धरती, दीवारों, छतों मेहराबों तथा चैक में तरह-तरह के आलेखन बनाए जाते हैं। जिसे माण्डना कहते हैं बंगाल में त्यौहारों में विवाह में उत्सवों आदि के अवसर पर 'अल्पना' बनाई जाती है। अल्पना का घरों की लिपि-पुती भूमि पर तथा दीवारों पर गीले सफेद रंग से रेखांकन किया जाता है।



चित्र संख्या-1



चित्र संख्या-2



चित्र संख्या-3



चित्र संख्या-4

पट्ट चित्रकला यह उड़ीसा की पारम्परिक चित्र कला है इस कला में सुभद्रा, बलराम, भगवान, जगन्नाथ, दशावतार और कृष्ण के जीवन से सम्बन्धित है बली कला महाराष्ट्र के जनजातीय प्रदेश में रहने वाले जनजातीय वर्ग से है ये अलंकृत चित्र गोंड तथा कोल जैसे जनजातीय घरों और पूजा घरों के फर्शों और दीवारों पर बनाए जाते हैं। वृक्ष-पक्षी, नर नारी मिलकर वर्ली चित्र को पूर्णता प्रदान करते हैं। ये चित्र शुभ अवसरों पर महिलाओं द्वारा मिलकर बनाए जाते हैं वर्ली जीवन शैली की झाकी सरल आकृतियों में खूबसूरती से प्रस्तुत की जाती है।

थंका कला भवान बुद्ध के जीवन और शिक्षाओं पर आधारित कला को थंका चित्र कहा कहते हैं। यह कला भारतीय, नेपाली तथा तिब्बती संस्कृति एवं दार्शनिक मूल्यों एवं धर्म को अभिव्यक्त करती रही है। नेपाल के कुछ क्षेत्रों की प्रमुख कला है मधुबनी के जिवधारपुर गांव इस लोक कला का प्रमुख केन्द्र है।

निष्कर्ष

भारतीय लोक कला प्राचीन काल से आधुनिक युग तक सांस्कृतिक और सौंदर्यात्मक धरोहर के रूप में चली आ रही है। यह मानव जीवन की अभिव्यक्ति, परंपराओं और विश्वासों का सशक्त माध्यम है, जो समाज को एकता और रचनात्मकता से जोड़ती है। चित्रकला, मूर्तिकला, हस्तकला और शिल्पकला जैसे विविध रूपों में यह कला गाँवों से शहरों, रेगिस्तान से पहाड़ों तक फैली है। राजस्थान के मांडना, बंगाल की अल्पना, उड़ीसा के पट्ट चित्र और मधुबनी कला जैसे क्षेत्रीय स्वरूप इसकी समृद्ध विविधता को दर्शाते हैं। यह कला न केवल सौंदर्य प्रदान करती है, बल्कि धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों को पीढ़ियों तक हस्तांतरित करती है। समय के साथ विकसित होने के बावजूद, लोक कला अपनी जड़ों से गहरे जुड़ी रही है। स्वतंत्रता के बाद हस्तकला उद्योग के पुनरुद्धार ने इसे वैश्विक पहचान दी। यह आधुनिक कलाकारों को प्रेरणा देती है और विश्व स्तर पर अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करती है। लोक कला राष्ट्रीय निधि है, जो शाश्वत और अटूट है। यह मानव जीवन को अर्थ, रंग और आत्मिक शांति प्रदान करती है, जिसके बिना संस्कृति अधूरी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. आनंद, के. सी. (2004). *भारतीय लोक कला और शिल्प*. नई दिल्ली, भारत: नेशनल बुक ट्रस्ट.
2. दत्ता, सरोज. (2018). *भारत की लोक कला: एक दृश्य यात्रा*. मुंबई, भारत: मार्ग फाउंडेशन.

3. सुब्रमण्यम, वी. के. (2011). *भारत की कला: लोक और जनजातीय कला*. नई दिल्ली, भारत: रूपा पब्लिकेशन्स.
4. सिंघानिया, नितिन. (2020). *भारतीय कला और संस्कृति* (4था संस्करण). नई दिल्ली, भारत: मैकग्रा हिल एजुकेशन.
5. जैन, ज्योतिंद्रा. (2017). *भारतीय लोक कला की परंपराएँ*. नई दिल्ली, भारत: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
6. अग्रवाल, आर. एस. (2010). *भारतीय चित्र कला का इतिहास*. नई दिल्ली, भारत: साहित्य अकादेमी.
7. अग्रवाल, जी. के. (2015). *कला-कलम*. जयपुर, भारत: राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादेमी.
8. प्रताप, रीता. (2012). *भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास*. नई दिल्ली, भारत: वाणी प्रकाशन.
9. गोस्वामी, प्रेम चंद. (2018). *आधुनिक भारतीय चित्रकला का आधार स्तंभ*. लखनऊ, भारत: उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान.
10. शर्मा, गोपी नाथ. (2008). *राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास*. जयपुर, भारत: राजस्थान साहित्य अकादेमी.